प्रजातन्त्र, पिछड़ा वर्ग एवं प्रशासन

डॉ. किरण पूनिया
सह–आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
श्री गोविन्द गुरू राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा (राज.)

ब्रिटिश शासन ने व्यापार के माध्यम से भारतीय समाज को दरिद्र एवं परावलम्बी बनाते हुए आर्थिक दृष्टि से विघटित कर दिया और मुगलकाल से चली या रही कठोर जाति व्यवस्था को अप्रत्यक्ष रूप से प्रश्रय देते हुए प्रमुख जातियों को एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा कर दिया। उनका उद्देश्य यह रहा कि भारतीय समाज में एकता, सौहार्द तथा सहयोग की भावनाएं समाप्त हो जायें और वह छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट कर आर्थिक सामाजिक सत्ता के पदसोपान में इस प्रकार समा जाय कि स्वयं समाज का एक वर्ग दूसरे को दबाता रहे। ढेबर समिति के अनुसार "स्वतन्त्रता पूर्व के कबीला क्षेत्रों की दशा का सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि अलगाव एवं निष्क्रियता की नीति का उद्देश्य मात्र यथास्थिति बनाये रखना था। इसका नतीजा यह हुआ कि भारत के अधिकतर भागों में आदिम जातियां दरिद्रता की स्थिति में रह गई।"[1] सामाजिक सम्पर्क एवं अर्थव्यवस्था दोनों अत्यधिक अन्तःनिर्भर है। कच्चा माल उत्पन्न करने एवं उसके निर्यात पर आधारित ब्रिटिशकालीन अर्थव्यवस्था ने सप्राण सामाजिक सम्पर्क समाप्त कर दिया जिसमें उत्पादन का तरीका गैर सामूहिक हो गया तथा समाज के अधिकतर वर्ग मात्र गुजर करने की स्थिति में भी नहीं रहे। फलतः व्यवसाय पर आधारित जातियां मात्र कठोर सामाजिक जाति के रूपों में सिकुड़कर और अधिक नकारात्मक भूमिका निभाने लगी। विवाह, नुक्ता, जाति पंचायत आदि संस्थानों के कारण व्यक्तियों का जातिगत परिचय जाति की सीमाओं के भीतर ही सम्पर्क न केवल बना रहा बल्कि और मजबूत होता गया। आर्थिक क्षेत्र में अन्तःनिर्भरता के प्रभाव तथा सामाजिक रूप से जड़ता व कर्मकाण्ड की कठोरता में वृद्धि के कारण सामन्ती ढांचा अधिक कठोर होता गया। स्वतन्त्रता के समय का समाज अत्यधिक रूढिवादी, जड़ तथा सामन्ती ढांचे में जकड़ा हुआ था।

राष्ट्र के नेतृत्व के समक्ष भारत को एक विकसित राष्ट्र में बदलने की जिम्मेदारी आयी। विकास[2] के लिए एक ऐसे जीवट तथा एकीकृत समाज की आवश्यकता थी जो राष्ट्र निर्माण मे

सकारात्मक सहयोग प्रदान कर सकता। इसके लिए प्रत्येक नागरिक तक शासन की पहुंच के लिए एक तन्त्र स्थापित करना तथा शासन की प्रत्येक क्रिया में अधिकतम नागरिकों के हिस्से[3] को उत्साहित करना और उसे अंतरजातीय तथा अन्तराजाति (Intracaste) सामन्ती ढांचे के मनोवैज्ञानिक एवं भौतिक दबाव से मुक्त करना आवश्यक था। तत्कालीन व्यवस्था में ओछी जाति, प्रभावी जाति[4] से तथा कम स्तर का परिवार प्रभावी परिवारों[5] से हर प्रकार से दबा हुआ था

संविधान निर्माताओं ने यह स्वीकार किया कि कुछ जाति तथा क्षेत्र ऐसे है जो अन्य जाति तथा क्षेत्रों की तुलना म बहुत पिछड़े हैं। राष्ट्रीय एकता एवं विकास को दृष्टि से इन पिछड़े वर्गों एवं क्षेत्रों का विकास अत्यधिक आवश्यक एवं कठिन कार्य माना गया है। संविधान के नीति निर्देशक तत्त्वों में यह प्रावधान रखा गया है कि "राज्य जनता के दुर्बलतर विभागों के विशेषतया अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा; सामाजिक अन्याय तथा सब प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।[6] संविधान के अनुसार अनुसूचित आदिम जातियों के उत्थान के लिये हाथ में ली गई परियोजनाओं के लिए भारत की संचित निधि से मूल तथा आवर्तक राशियां दी जा सकेंगी।[7] पिछड़े वर्गों की दशा जानने एवं उनके उत्थान के लिए विशेष पदाधिकारी[8] तथा आयोग नियुक्त करने[9] का भी प्रावधान है।

यद्यपि हमारी अधिकतर जनसंख्या विकास के मानदण्ड से पीछे ही मानी जा सकती है किन्तु इसका भी यह बहुत बड़ा हिस्सा हमारे ही विकासशील वर्ग की तुलना में बहुत पिछड़ा हुआ है। इसके लिए विभिन्न परियोजनाओं के माध्यम से गत 30 वर्षों में अनेक प्रयत्न किये गये हैं किन्तु आशातीत सफलता नहीं मिल सकी। प्रस्तुत लेख इन्हीं प्रयत्नों के मूल्यांकन का एक प्रयास है। इसमें पिछड़े वर्गों की पहचान, उनसे सम्बन्धित नीति तथा इसके क्रियान्वयन के लिए व्यवस्था – इन तीन मुद्दों पर विचार किया जायेगा।

पिछड़े वर्गों की पहचान :

पिछड़ा, विकासशील तथा विकसित – ये तुलनात्मक अवधारणाएं हैं। इनके निश्चित मानदण्ड नही हो सकते। एक विकासशील वातावरण में पिछड़े एवं गैर–पिछड़े वर्गों के बीच कोई वैज्ञानिक विभाजन रेखा नहीं की जाती वह विभाजन अस्पष्ट एवं विवेकाधीन ही होगा। हमारे संदर्भ

में अभी तक ऐसे कोई निश्चित मानक स्थापित नहीं किये जा सके है जिनके आधार पर यह कहा जा सके कि एक वर्ग को क्यों पिछड़ा मान लिया है और ठीक उसी तरह के दूसरे को क्यों नहीं। समाज कल्याण एवं पिछड़े वर्गों के अध्ययन दल (रेणुका अध्ययन दल) के अनुसार "हम यह अनुभव करते हैं कि पिछड़ेपन के लक्ष्य एवं कामचलाऊ परिभाषा के अभाव में विशेषाधिकारों के लिए जन्म पर आधारित पिछड़े समुदाय बढ़ते जा रहे हैं। एक भूमिहीन श्रमिक को, बिना यह देखे कि वह किस समुदाय का है, सहायता की आवश्यकता हैं। यही सिद्धान्त बेघरबार, बेरोजगार, ज्ञानी तथा बीमार व्यक्तियों पर भी लागू होता है।"[10]

पिछड़े वर्ग के संदर्भ में गत वर्षों में अनेक अवधारणाएं विकसित हुई जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित है –अनुसूचित जाति, अनुसूचित आदिम जाति, सूचित जाति, पिछड़े वर्ग या दुर्बल वर्ग तथा अति गरीब। दुर्बलतर वर्ग तथा अतिगरीब के अतिरिक्त सभी में वर्ग[11] की बजाय जातियों को शामिल किया गया है। इनका आधार सामाजिक वर्ग[12] भी नहीं है क्योंकि ऐसा व्यक्ति भी जो 30 वर्ष से केन्द्रीय मंत्री रहा हो पिछड़े वर्गों में सम्मिलित माना जा रहा है। अनुसूचित जाति या अनुसूचित आदिम जाति सन् 1931 की जनगणना के द्वारा अन्य जातियों से अलग स्वीकार की गई। भारत के संविधान में यह प्रावधान रखा गया है कि राष्ट्रपति राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख से परामर्श करने के पश्चात् लोक अधिसूचना द्वारा ऐसी जातियों का उल्लेख कर सकेगा। प्रत्येक राज्य के लिए वहां की जातियों के अनुसार इनकी अलग–अलग सूचियां बनाई गई हैं।

अनुसूचित जातियों में सामान्यतः वे जातियां शामिल की गई हैं जो आर्थिक रूप से कमजोर एवं सामाजिक दृष्टि से अछूत समझी जाती रही है। ऐसी जातियां जो पीढ़ियों से अप्रिय, अमान्य तथा कमीने धंधे करती आई हैं जैसे–मल उठाना, झाड़ू देना, मृत पशु उठाना, चमड़ा उतारना तथा चर्मशोधन आदि। अनुसूचित आदिम जातियां वे जातियां है जो ऐसे क्षेत्रों में रही है जिनका भौतिक विकास नहीं हुआ या जो घुम्मकड़ रही है। इन जातियों तक सभ्यता बहुत कम पहुंच पायी। सूचित जातियां वे जातियां हैं जो वर्षों से अपराध कृत्यों के माध्यम से अपना गुजर कर रही थी। ऐसी जातियां घुम्मकड़ जातियां रही हैं जो चोरी करने, राहगीरों को लूटने आदि के कार्य करती रही है। इस प्रकार तीनों ही प्रकार की जातियां बाकी समाज से कट कर अलग हो गई। इन्हें विकास की धारा के साथ जोड़ने के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता समझी गई।

'अन्य पिछड़े वर्गों' का सीमांकन करना कठिन है। इसमें अनेक ऐसी जातियां जो अनुसूचित जातियां नहीं थी किन्तु अन्य जातियों से पिछड़ी थी, जो शूद्र[13] थी परन्तु अछूत नहीं जैसे नाई, बढ़ई आदि को पिछड़े वर्ग में शामिल कर लिया। राजनीति कोष के अनुसार "पिछड़े हुए वर्गों का अभिप्राय समाज के उस वर्ग से है जो आर्थिक, सामाजिक तथा शैक्षिक निर्योग्यताओं के कारण समाज के अन्य वर्गों की तुलना में नीचे स्तर पर हो। यद्यपि संविधान में इस शब्दबन्ध का प्रयोग एकाधिक स्थलों पर हुआ है, (अनुच्छेद 16(4) और 340 में) पर इसकी परिभाषा कहीं नहीं की गई।"[14] पिछड़े वर्गों मे जातियों के साथ–साथ कुछ वर्ग जैसे महिलाएं, अनाथ, भिखारी आदि भी शामिल किए गए हैं।

'दुर्बलतर वर्गों' या 'अशक्त वर्ग' शब्दबन्ध का भारत के संविधान में जिस प्रकार उपयोग किया गया है उससे यह तो अनुमान लगाया जा सकता है कि इसमें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित आदिम जातियों के अलावा भी कुछ वर्गों को शामिल किया गया है किन्तु यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि वे कौन से वर्ग होंगे। रेणुका अध्ययन दल ने निम्नलिखित प्रकार के वर्गों को इसमें सम्मिलित करने का सुझाव दिया है (1) बहुत कम भूमि वाले किसान (2) भूमिहीन मजदूर, (3) बहुत छोटा दस्तकार (4) अनुसूचित जातियां (5) उच्च जाति के गरीब (6) महिलाएं (7) असहाय लोग जैसे विधवाएं, अनाथ, वृद्ध, बेरोजगार आदि।[15]

पंचायत राज अध्ययन दल के अनुसार उपर्युक्त सूची के अंतर्गत इतनी बड़ी जनसंख्या अशक्त वर्ग में आ जायेगी कि उसके लिए कोई उपाय करना असंभव होगा। इसलिए इस अध्ययन दल ने निम्नलिखित वर्गों को पिछड़े वर्गों में शामिल करने का सुझाव दिया है – (1) अनुसूचित जातियां, अनुसूचित जनजातियां, विमुक्त जातियां तथा घुमक्कड़ जातियां (2) एक स्टैण्डर्ड एकड़ से कम जमीन वाले किसान, (3) भूमिहीन मजदूर (4) छोटे कारीगर एवं छोटी दस्तकारियों में लगे मजदूर, तथा (5) असहाय, अनाथ, बेरोजगार तथा अपंग।[16] हाल ही में ऐसे परिवारों के लिए कार्य किया जाने लगा है जो गरीबी की रेखा से नीचे है। ये ऐसे परिवार है जिनके आर्थिक विकास की क्षमता शून्य हो। इन्हें 'अति गरीब' कहा जा सकता है। इस प्रकार यदि उपर्युक्त जातियो और वर्गों को पिछड़े वर्गों में शामिल किया जाता है तो यह कुल जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग होगा।[17]

पिछड़े वर्गों की सहायता की दिशा में प्रथम कदम उनका इस प्रकार चयन करना है कि उन्हें कोई ऐसी विशेष सहायता दी जा सके जिसका एक निश्चित परिणाम आये। साथ ही चयनित वर्गों में वही बने रहने की भावना तथा उच्च वर्ग में इनके प्रति ईर्ष्या या घृणा की भावना भी विकसित न हो। प्रमुख उद्देश्य भारतीय समाज को जोड़ना है, तोड़ना नहीं। इसलिए जाति चयन का आधार नहीं हो सकता। एक ही जाति एक क्षेत्र में छूत और दूसरे में अछूत हो सकती है तथा एक जाति की एक उपजाति छूत और दूसरी अछूत हो सकती है।[18] एक ही स्तर की हजारों जातियां खोजी जा सकती है। उदाहरण के लिए 1901 में मुख्य जातियों और कबीलों की संख्या 2378 थी[19] तथा 1891 में केवल जाट और अहीर जाति में 1700 तथा कुरमी में 1500 उप–जातियां थी।[20]

व्यवहार में पिछड़े वर्गों की घोषणा करते समय राज्य सरकारों ने स्थिति को और अधिक अस्पष्ट कर दिया। उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश सरकार ने 64 जातियों को अनुसूचित जाति में रखा है। इसमें से अनेक ऐसी जातियां हैं जो जनसामान्य में इन नामों से नहीं जानी जाती तथा एक ही जाति के पर्याय या उपजाति के नाम भी रख दिये गये है जैसे बलाई वाल्मिकी, चमार आदि। कुछ वर्ग ऐसे हैं जो न तो जाति है और न ही अछूत जैसे बेलदार, शिल्पकार आदि। पिछड़े वर्गों में 37 जातियों को रखा है। इनमें अनेक ऐसी जातियां है जिन्हें सामान्य ग्रामीण वर्गों से किसी भी दृष्टि से अलग नहीं किया जा सकता जैसे अहीर, गुजर, हलवाई, सुनार, कुम्हार, माली, जोगी, दर्जी आदि।[21] संभवतः पिछड़े वर्गों में अनेक जातियों को राजनैतिक कारणों से शामिल किया गया है तथा उनका हटाया जाना कठिन है।

नीति :

पिछड़े वर्ग या जातियां जीवन के जिस पहलू में समाज के अन्य वर्गों से पिछड़ी है मात्र उसी पिछड़ेपन को दूर करने के लिए कार्य किया जाना चाहिए। प्रमुख उद्देश्य इन वर्गों को समाज के बाकी वर्गों की विकास धारा के साथ जोड़ना है। उदाहरण के लिए यदि यह कहा जाय कि अनुसूचित जाति शिक्षा की दृष्टि से पिछड़ी है क्योंकि राजस्थान में 1961 की जनगणना के अनुसार इस वर्ग में साक्षरता लगभग 6.5 प्रतिशत थी जबकि 1971 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की 15 तहसीलों में 10 प्रतिशत से भी कम साक्षरता है और चौहटन तहसील में तो मात्र

5.04 प्रतिशत है जबकि इस तहसील में सवर्ण जनसंख्या 80 प्रतिगत से भी अधिक है। अतः यह पिछड़ापन सामान्य जनता का पिछड़ापन माना जाना चाहिए न कि किसी वर्ग विशेष का।

उत्थान के ठोस उद्देश्य के लिए छुआछूत अनुसूचित जाति के, सम्पर्क सुविधाओं एवं सभ्यता का पिछड़ापन आदिम जातियों तथा क्षत्रों के, तथा गरीबी अति–गरीब के पिछड़ेपन के प्रमुख कारण माने जा सकते हैं। ये ही कारण है जो इन वर्गों को समाज के अन्य वर्गों से काट देते हैं। साथ ही यदि इन तीन प्रकार के वर्गों के सामाजिक–आर्थिक पिछड़ेपन का प्रमुख कारण इन तीन भिन्न तत्त्वों को स्वीकार कर लिया जाता है तो समाधान के उपाय असानी से खोजे जा सकते हैं।

छुआछूत को दूर करने के लिए सरकार की नीति यह रही है कि सवर्ण वर्गों को इस प्रकार प्रभावित किया जायेगा कि वे अछूतों को गले लगा ले। साथ ही छुआछूत में विश्वास करने वाले को कानून के समक्ष अपराधी माना गया है।[22] व्यावहारिक बात यह है कि छुआछूत का संबंध अप्रिय एवं कमीने धंधे से है। पश्चिम बंगाल के कुछ गांवों में मूई–माली (मेहतर), चमारों से अधिक ऊँचे हैं क्योंकि मेहतर वहाँ की खेती या चौकीदारी करते हैं और चमार हड्डियां एकत्र करते हैं।[23] इसका संबंध ऐसे धन्धे को करने वाली जाति के गांव में स्थायी आवास से भी है। इसीलिए जातियों के बीच भेदभाव शहरों की बजाय गांवों में अधिक है।[24] यदि ये जातियां ऐसे धन्धों को करती रहती हैं तो कोई कानून, प्रचार या आदर्श छुआछूत को नहीं मिटा सकता। यदि सवण जाति का धनी व्यक्ति भी मल होने का काम करने लगे तो उससे भी लोग घृणा करने लगेंगे। फिर मेहतर तो यह कार्य करता आया है जिससे समाज घृणा का आदि हो गया है।

अछूत व्यक्ति मजबूरी में ऐसे धन्धे कर रहा है। आर्थिक राहत मिलते ही ये अपना धंधा बदल लेते हैं।[25] यह भी देखना है कि क्या इन धंधों के बिना काम चलाया जा सकता है। विकास के वर्तमान स्तर पर शहरों में सफाई की विशेष आवश्यकता रहती है। चमड़े तथा हड्डी का भी हमारे उद्योगों में कम महत्त्व नहीं है।[26] इसलिए ऐसा विकल्प सोचना है कि दूसरे वर्ग भी इन धन्धों को करने के लिए तैयार हो सके और नहीं तो इन धन्धों के बदले इतना धन दिया जाय कि अछूत वर्ग के व्यक्ति गरीब न रहें। यदि आर्थिक स्थिति अच्छी होगी तो चमड़े का धन्धा करते हुए भी व्यक्ति सम्मान पा सकता है। चमड़े का व्यापार करने वाले चमड़िया सेठ है, जूते की अधिकतर दुकानें सवर्ण लोगों की हैं तथा चमड़े के कारखानों में काम करने वाले सवर्ण व्यक्ति को भी समाज

में अछूत नहीं समझा जाता। अतः छुआछूत को समाप्त करने का सबसे आसान एवं उचित तरीका यह हो सकता है कि ऐसे धन्धे के बदले, जिसे घृणा की दृष्टि से देखा जाय, अधिक मजदूरी दी जाय। यह इसलिए क्योंकि ऐसे धन्धे में श्रम के साथ बीमारी की तथा समाजिक स्तर गिरने की जोखिम निरन्तर बनी रहती है। इस प्रकार के धन्धे के बदले यदि धन दिया जायेगा तो यह सर्वाधिक गरीब के पास पहुंचेगा। उसे प्रबुद्ध वर्ग (प्रशासक या राजनेता) बीच में नहीं रख पायेगा। यदि पर्याप्त मात्रा में धन मिल जाता है तो छुआछूत के समाप्त न होने पर भी वह व्यक्ति सभी नागरिक अधिकारों का उपभोग कर सकेगा। उसका मकान, रहन–सहन यादि का स्तर उच्च हो जायेगा और वह विकास के लिए स्कूल, चिकित्सा आदि सभी सुविधाओं का पूरा उपयोग करेगा।

छुआछूत का संबंध स्थायी आवास से भी है। एक जाति तब तक अछूत मानी जायेगी जब तक वह गांव में स्थायी तरीके से प्रवास करती रहेगी। जब तक ग्रामीण किसी जाति को अछूत कहते रहने में कोई नुकसान न समझेंगे तो वे अपनी प्रथा को तोड़ेंगे नहीं। ऐसे वर्गों को गांवो से हटा कर शहरों में रोजगार सहित बसाना भी व्यावहारिक है। समान्यतः यह देखा जाता है कि खेतीहर मजदूर तथा कृषि में बटाईदार आदि से सवर्ण भूस्वामी छुआछूत अधिक नहीं कर पाता। अतः यदि सवर्ण एवं अछूत को धंधे के आधार पर अन्योन्याश्रित कर दिया जाय तो छूआछूत कम हो सकती है।

अनुसूचित आदिम जाति तथा आदिम जाति क्षेत्रों को यदि भौतिक सुविधाओं से जोड़ दिया जाय, और उनके लिए आर्थिक शोषण के विरूद्ध सुरक्षा दिलवाने का प्रबन्ध कर दिया जाय तो शीघ्र ही वे शेष समाज की धारा में जुड़ सकते है।

छुआछूत को दूर करने और आदिम जातियों को सभ्यता की दिशा में अग्रसर करने के बाद समग्र समस्या आर्थिक ही बची रहती है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति की दरिद्र स्थिति को नकारा नहीं जा सकता। किन्तु जाति के आधार पर आर्थिक प्रगति के प्रयास में सफलता नहीं मिल सकती। गत 30 वर्षों के अनुभव से देखा जा सकता है कि विशेष प्रतिनिधित्व एवं रोजगार में आरक्षण तथा विशेष सहायताएँ जैसे ऋण, भूमि, छात्रवृत्तियां आदि इन जातियों के ऐसे परिवारों को मिली हैं जो पहले से ही आगे बढ़े हुए थे।[27] ऐसे परिवारों के समक्ष न तो सामाजिक समस्या है और न ही आर्थिक। वे शहर में रहते है, सवर्णों के समान धंधे करते हैं तथा राजनैतिक एवं

आर्थिक शक्ति प्राप्त है। ऐसे सचेत परिवारों को और आगे बढाने से पिछड़े वर्गों को उन व्यक्तियों से भी हाथ धोना पड़ता है जो अन्यथा इन वर्गों में चेतना लाते और नेतृत्व प्रदान करते। वर्तमान नीतियों के कारण ऐसे व्यक्ति प्रतिनिधित्व तो नहीं करते, वे यह रूचि भी जाहिर करने लगते हैं कि ये वर्ग सदा इसी स्थिति में तथा विशेषाधिकार प्राप्त बने रहें ताकि उसका लाभ ऐसे व्यक्तियों को मिलता रहे। इस समय पिछड़ी जातियों में वे जातियां अधिक लाभ प्राप्त कर रही है जो सवर्ण के अधिक नजदीक हैं जैसे चमार, दुसाध, धोबी आदि[28] और वे भी शहर में निवास करने वाले।

वर्तमान नीति ने जाति चेतना को अधिक बढ़ाया है। इसने दोनों ही वर्गों (अछूत एवं सवर्ण) को बिना किसी लाभ एवं परिवर्तन के अनावश्यक रूप से एक–दूसरे का विरोधी बना दिया है। पिछड़ी जातियों के उत्थान का विरोध सवर्ण में मध्यम स्तर की जातियों द्वारा अधिक किया जा रहा है क्योंकि वे इन जातियों से अपने समान स्तर पर आने का खतरा मानते हैं। साथ ही वे उन्हें दी गई रियायतों के प्रति ईर्ष्यालू है।[29] विशेष रूप से गरीब वर्ग। यदि इन जातियों में भी गरीबी का निदान आर्थिक तरीकों से केवल गरीब परिवारों तथा समाज के अन्य गरीब परिवारों को साथ लेते हुए किया जाय तो जातीय असमानता स्वतः ही प्रभावहीन होकर औपचारिकता मात्र रह सकती है। इससे आर्थिक प्रभाव गुट भी विकसित हो सकते हैं।

प्रशासन :

यह प्रशासन तन्त्र[30] की अक्षमता ही मानी जा सकती है कि गत 30 वर्षों में सामाजिक–आर्थिक ढांचे में परिवर्तन की ओर बहुत नहीं बढ़ा जा सका है। पिछड़े वर्ग आज भी सम्पूर्ण समाज के संदर्भ में यथास्थिति बनाये हुए है। साथ ही अमीर–गरीब के बीच की खायी बढ़ी है। इसका यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि लोकसेवा की क्षमता पर कोई संदेह है। किन्तु प्रशासन के हर स्तर पर लोक सेवा जन प्रतिनिधियों के साथ मिलकर जो कुछ कर पाती है वह पिछड़े वर्गों के पक्ष में नहीं जाता। पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित किसी भी प्रकार की रियायतें सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक, उचित व्यक्तियों तक नहीं पहुंचायी जा सकी। पिछड़े वर्गों के महानिदेशक श्री मूर्ति के अनुसार "दुर्भाग्यवश राज्य सरकारों ने पहले भी बंधक मजदूर के सम्बन्ध में कानून बनाये हैं किन्तु फिर भी यह प्रथा चल रही है।"[31] इसी प्रकार भूमि सुधार, सम्पत्ति, सीमांकन, छुआछूत निवारण आदि कानून नाममात्र को ही लागू हो पाये हैं।

पिछड़े वर्गों के संदर्भ में यह माना जा सकता है कि न तो वह व्यक्ति समूह स्पष्ट है जिनके उत्थान के लिए कार्य करना है और न ही उद्देश्य स्पष्ट है। यदि एक सुनार, लोहार, कुम्हार, अहीर, गूजर को पिछड़े वर्ग में शामिल किया जाता है तो आसानी से यह नहीं सोचा जा सकता कि इनके लिये क्या किया जाना है। पिछड़े वर्गों के नाम पर धन तो खर्च किया जाना है अतः उसके दुरुपयोग को भी रोका नहीं जा सकता।

पिछड़े वर्ग के उत्थान की जिम्मेदारी केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण मंत्रालय तथा केन्द्रीय समाज कल्याण मंडल की है। राज्य स्तर पर यह जिम्मेदारी समाज कल्याण विभाग तथा समाज कल्याण बोर्ड की है। जिला स्तर पर कुछ राज्यों में समाज कल्याण अधिकारी रखे गये हैं। खण्ड स्तर पर इस कार्य के लिए केवल उन्हीं राज्यों में पंचायत समिति की अलग समितियां बनाई गई है जिसमें ये वर्ग अधिसंख्यक हैं। ये सभी इकाइयां समन्वय करने के लिए स्थापित की गयी है। ऐसी बहुत कम क्रियाएं हैं जो समाज कल्याण अभिकरणों को सौंपी गई हैं और जिनके लिए बजट में अलग प्रावधान है। सरकारी संगठनों के साथ ही साथ सरकारी अनुदान पर आधारित ऐच्छिक संगठन भी इस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। किन्तु रेणुका अध्ययन दल के अनुसार ऐच्छिक संगठन मात्र प्रचार कार्यों में धन व्यय करते हैं। इससे कोई ठोस लाभ नहीं हुआ है। ये प्रायः धन का दुरुपयोग ही करते हैं।[32]

इस प्रकार पिछड़े वर्गों क उत्थान के लिए कोई ठोस व्यवस्था स्थापित नहीं की गई है। समाज कल्याण विभाग का प्रमुख कार्य विकास से संबंधित विभागों से पिछड़े वर्गों को प्राथमिकता एवं रियायतें दिलवाना है। कार्य क्षेत्र के स्तर पर क्योंकि पंचायत समिति एवं ग्राम पंचायतों के माध्यम से ये रियायतें दी जाती है, इसलिए प्रभावी जातियों तथा पिछड़ी जातियों में भी प्रभावी परिवारों की भूमिका स्वतः महत्त्वपूर्ण हो जाती है। सम्भवतः हमने समाज के जाति के रूप में सामन्ती ढांचे पर आवश्यकता से अधिक बल दिया है और जाति के भीतर के सामन्ती ढांचे पर कोई ध्यान नही दिया है। स्थानीय प्रशासकों का भी ऐसा व्यक्तित्व नहीं होता कि मात्र सामाजिक न्याय के लिए वे प्रभावी ताकतों से टकराएं। किसी प्रजातान्त्रिक वातावरण में यह व्यावहारिक भी नहीं है। इस स्तर पर पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधि भी अपने वर्ग के पिछड़े व्यक्तियों को सहारा देने का प्रयास नहीं करते। प्रतिनिधि सामान्यतः नामजद या सहवृत होते हैं और इसलिए ये पिछड़ी जातियों में प्रभावी जाति के प्रभावी परिवारों से ही होते हैं। ये प्रतिनिधि अन्य जातियों के प्रभावी

गुटों से पूरी तरह संबंधित रहते हैं। वे जाति के पिछड़े व्यक्तियों के हित की तलना में गुट के दबाव को अधिक महत्त्व देते हैं।

ऐसी स्थिति में होने के बावजूद भी रेणुका अध्ययन दल ने यह सुझाव दिया है कि "पंचायत छुआछूत को दूर करने में प्रभावी भूमिका निभा सकती है, उन्हें पर्याप्त सत्ता देने के प्रश्न पर विचार किया जा सकता है।" यद्यपि दल ने आग कहा कि "यह ध्यान में रखना होगा कि सदियों से पिछड़े वर्गों के हितों को उसी समुदाय से नुकसान होता रहा है जिन्हें अब कानूनी सत्ता और पिछड़े वर्गों के विशेष हितों के संरक्षक के रूप में मान्यता मिल गई है।"[33] इसी प्रकार माननीय जयपाल सिंह ने संविधान निर्मात्रो सभा में 'उद्देश्य प्रस्ताव' पर बोलते हुए कहा था – "मेरे लोगों (आदिम जातियों) को उस प्रकार की सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है, जो पं. नेहरू ने प्रस्ताव में रखी है। वास्तव में उन्हें मंत्रियों के विरुद्ध सुरक्षा चाहिए।"[34] यद्यपि रेणुका अध्ययन दल ने इन वर्गों की सुरक्षा के लिए यह सुझाव दिया है कि पंचायत समिति में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए अलग कार्यात्मक समितियां बनाई जायें जिसमें ऐसे समाजसेवी व्यक्ति नामजद किये जायें जो मजिस्ट्रेट द्वारा स्वीकृति सूचि में से हों। साथ ही पंचायत समिति बजट का एक निश्चित हिस्सा इन वर्गों पर व्यय किया जाए।[35] किन्तु स्वार्थी व्यक्ति ऐसे समाजसेवक बनने का ढोंग करते रहे हैं। मजिस्ट्रेट भी इनसे नाराजगी मोल नहीं लेगा, क्योंकि किसी भी तरह मामला राजनैतिक बन जाता है। इसलिए पंचायत समिति का सारा बजट भी यदि इन वर्गों पर व्यय कर दिया जाय तो भी कोई लाभ नहीं होगा।

जिस प्रकार पिछड़े वर्गों के प्रतिनिधि या नामजद व्यक्ति उत्थान कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को बल प्रदान नहीं कर सकते उसी प्रकार लोकसेवा में इनका प्रतिनिधित्व भी इस समस्या के समाधान में सहायक सिद्ध नहीं हुआ है। इन वर्गों के जो व्यक्ति शिक्षा एवं सरकारी पदों के माध्यम स एक विशेष सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्तर प्राप्त कर लेते हैं, वे फिर से अपने को पिछड़े व्यक्तियों से नहीं जोड़ना चाहते। ये जाति की बजाय अपने परिवार के भविष्य को प्राथमिकता देते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रशासकीय दृष्टि से पिछड़े वर्गों के संदर्भ में क्रियान्वयन तकनीक की कमी नहीं है। कमी केवल क्रियान्वयन करने वाले व्यक्तियों की सकारात्मक वृत्ति की

है। साथ ही सेवा प्राप्त करने वाले व्यक्तियों में प्रशासन से सेवा खींच सकने की क्षमता की कमी भी है। किन्तु इस प्रकार प्रशासन को कार्य करने के लिए केवल स्वच्छ व्यवस्था में जागरूक नागरिकगण ही मजबूर कर सकता है। प्रभावी एवं कुशल प्रशासन के लिए आवश्यक है कि उद्देश्य स्पष्ट हों उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रभावी परियोजनाएं तैयार की जाए और उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए बहुत सीमित मात्रा में ऐसा व्यक्ति समूह ही चुना जाय जिसे वास्तव में विशेष व्यवहार की आवश्कता हो। उदाहरण के लिए यदि उद्देश्य छुआछूत के कुप्रभावों को समाप्त करना हो और इस उद्देश्य को प्राप्त करने का यह तरीका अपनाया जाता है कि समाज की दृष्टि में औछे माने जाने वाले धंधों के लिए अन्य समान श्रम चाहने वाले धन्धों का दुगुना पारिश्रमिक दिया जाय, तो संबंधित व्यक्ति स्वतः निश्चित हो जाते हैं। इस स्थिति में प्रशासन का कार्य मात्र नियामकीय हो जायेगा। आर्थिक विकास के मामले में पिछड़े क्षेत्रों के अतिरिक्त किसी भी प्रकार जाति या वर्ग के लिए अलग प्रयास न किये जायें। आर्थिक सहायता पिछड़े वर्ग के परिवारों को अन्य वगो के आर्थिक पिछड़े व्यक्ति के साथ ही दी जानी चाहिए। अतः यदि उचित नीति अपनायी जाए तो प्रशासक के लिए करने को कुछ भी शेष नहीं रहेगा।

सारांश :

पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए जाति को आधार मानना निरर्थक है। भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में एक ही जाति का स्तर भिन्न रहता है। कोई एक जाति समान रूप से सभी क्षेत्रों में पिछड़ी या विकसित नहीं होती। एक ही जाति के सभी परिवार एक से स्तर के नहीं हो सकते।

यह निर्णय करना भी आवश्यक है कि पिछड़ेपन का प्रमुख कारण सामाजिक है या आर्थिक और वह पिछड़ापन किस तत्त्व विशेष के कारण आया। अनुसूचित जाति के लिए छुआछूत तथा आदिम जातियों के लिए भौतिक सम्पर्क साधनों की कमी ऐसे तत्त्व हैं जिनके कारण एक वर्ग का सामाजिक स्तर नीचा हुआ और दूसरा वर्ग अर्द्ध सभ्य एवं दरिद्र होता चला गया। जातियों के लिए ऐसी रियायतों, जिनकी हमारी अधिकतर जनसंख्या को आवश्यकता है, जैसे शिक्षा, चिकित्सा, आवास व विशेष वित्तीय सुविधाएं आदि की बजाय छुआछूत के नकारात्मक प्रभाव को कम करने के लिए ऐसे धंधों के लिए पर्याप्त वेतन की व्यवस्था कर दी जाय जिनके कारण ये वर्ग अछूत समझे

गये हैं तो समस्या का समाधान आसान हो जाता है। इसी प्रकार आदिम जाति क्षेत्रों के विकास के लिए अन्य क्षेत्रों से उनका भौतिक सम्पर्क स्थापित करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

पिछड़े वर्गों की किसी भी समस्या का समाधान प्रतिनिधित्व या रोजगार में रियायत तथा ऐच्छिक संगठनों के माध्यम से नहीं हो सकता। यदि इन वर्गों को जाति के आधार पर अलग माना गया तो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इनका सवर्ण से कभी मेल नहीं हो सकेगा

अतः घृणित धन्धों को वित्तीय दृष्टि से इतना लाभकारी बनाए, जिससे कि ऐसा परिवार सवर्ण के समान भौतिक सुविधाएं जुटा सके और आर्थिक विकास के लिए उन्हें समाज के अन्य गरीब परिवारों में सम्मिलित करने[36] के माध्यम से लक्ष्य की दिशा में अधिक तेजी से बढ़ा जा सकता है।

संदर्भ :

1. डेवर समिति प्रतिवेदन, 1961, पृ. 30
2. यहां विकास शब्द से तात्पर्य "सम्बन्धित क्षेत्र में वर्तमान एवं निकट भविष्य की समस्याओं के समाधान की क्षमता" से है। विस्तार के लिए देखिए, अन्तरसिंह : विकास प्रशासन का बढ़ता हुआ क्षेत्र – भारतीय सन्दर्भ में", लोकप्रशासन, वर्ष–3 अंक 1–2, जनवरी–जून 1976, पृ. 51–62
3. रिग्स : "प्रिग्मैटिक सोसायटीज एण्ड पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन", एडमिनिस्ट्रेटिव चेंज, 1:2, 1973, पृ. 18–24
4. यहां प्रो. एम.एन. श्रीनिवास की अवधारणा को स्वीकार किया गया है।
5. यहां प्रो. एस.सी. दूबे की अवधारणा को स्वीकार किया गया है।
6. भारत का संविधान, धारा 46
7. वही, धारा 275
8. वही, धारा 338
9. वही, त धारा 340
10. "रिपोर्ट आफ दि स्टडी टीम ऑन सोशल वेलफेयर एण्ड वेलफेअर आफ बैकवर्ड क्लासेज" (रेणुका अध्ययन दल), कमेटी ऑन प्लान प्रोजेक्ट, नई दिल्ली, जुलाई 1959, वॉल्यूम 1, पृ. 7, पैरा 22
11. आर्थिक आधार पर दो वर्ग हो सकते हैं–गरीब तथा अमीर।

12. सामाजिक वर्ग का अर्थ उन सभी व्यक्तियों (या परिवारों) से लिया जाता है जिनके पास किसी समाज या समुदाय के ढांचे में शक्ति, आय, सम्पत्ति या प्रतिष्ठा या इन सब तत्त्वों का मिश्रित रूप हो, गोल्ड एवं काव (सम्पादक) ए. डिक्शनरी आफ दि सोशल साइन्सेज, यूनेस्को, फ्री प्रेस, 1965, पृ. 618
13. जजमानी प्रथा के अंतर्गत इन्हें भी कमीना समझा जाता था।
14. कश्यप एवं गुप्ता : "राजनीतिक कोश", राजकमल, दिल्ली, 1971, पृ. 24–25
15. उद्धृत, पंचायत राज अध्ययन दल की रिपोर्ट, 1964, राजस्थान सरकार, पृ. 148
16. पंचायत राज अध्ययन दल की रिपोर्ट, पृ. 131
17. राजस्थान में 56 प्रतिशत परिवार गरीबी को रेखा से नीचे हैं जिनमें पिछड़े वर्गों के सभी परिवार शामिल नहीं है।
18. ब्लण्ट, ई.ए.एच. : दि कास्ट सिस्टम ऑफ नॉर्दर्न इण्डिया, लंदन, ऑक्सफॉर्ड यूनि. प्रेस, 1931, पृ. 334–35
19. सेन्सस आफ इण्डिया, 1901 वॉल्यूम 1, पृ. 537
20. ब्लण्ट, ई.ए.एच. : उपरोक्त, पृ. 37–38
21. जहीर एवं गुप्ता : "दि ऑर्गेनाइजेशन आफ दि गर्वनमेन्ट आफ यू.पी.", चांद एण्ड कम्पनी, 1970, पृ. 550
22. भारत का संविधान, धारा 17
23. मुखर्जी, राम कृष्ण : "सिक्स विलेजेज आफ बंगाल", बम्बई : पोपुलर, 1971, पृ. 161 24. 24. सच्चिदानन्द : "दि हरिजन एलीट" थोमसन प्रेस (इण्डिया) लि., 1977, पृ. 165
25. वही, पृ. 165
26. सन् 1958 में चमड़ा उद्योग का भारतीय उद्योग में चतुर्थ स्थान था – रेणुका अध्ययन दल, पृ. 186, पैरा 1
27. वही, पृ. 126 पैरा 14; सच्चिदानन्द, पृ. 126
28. सच्चिदानन्द, पृ. 174
29. वही, पृ. 174

30. प्रशासन क्रियान्वयन प्रक्रिया है और इसलिए विकास परियोजनाओं में प्रतिनिधि, सम्बन्धित नागरिक तथा लोक सेवक सभी प्रशासन तंत्र के हिस्से होते हैं।

31. मूर्ति, ओ.के. : डायरेक्टर जनरल आफ बैकवर्ड क्लासेज वेलफेयर : गृह मंत्रालय : बन्धक मजदूर पर सेमिनार : अक्टूबर 8–9, 1976, देहरादून।

32. रेणुका अध्ययन दल, पृ. 139 पैरा 5 व 10

33. वही, पृ. 193, पैरा 18, तथा पृ. 221 पैरा 43

34. कॉस्टीट्यूएण्ट असेम्बली डिबेट, वॉल्यूम प्रथम (दि. 13, 1916), पृ. 138

35. रेणुका अध्ययन दल, पृ. 211, पैरा 43

36. वही, पैरा 21 तथा पंचायत राज्य अध्ययन दल उपरोक्त पृ. 174